

प्राचीन जल-प्रबन्धन उपायों का जोधपुर के विशेष संदर्भ में विश्लेषण

आसुराम डऊकिया

सहायक आचार्य, भूगोल विभाग, राजकीय कन्या महाविद्यालय, बायतु बालोतरा, राजस्थान, भारत

सारांश

सृष्टि के प्रारम्भ से ही लोग नदियों, झरनों एवं पानी के भराव के आसपास के स्थानों पर रहते आये थे और वहीं पर उत्पन्न होने वाले फल-फूलों पर अपना जीवन-निर्वाह करते थे। बाद में वे लोग नदियों, झरनों और पोखरों से नलियाँ निकालकर खेती करने लगे। वर्षा के बाद नदी-नालों का पानी कम होने पर उन्होंने अपनी फसल को पानी देने के लिए नदियों में पानी रोकना शुरू किया, जिससे कुछ समय के लिए उनको पानी उपलब्ध हो जाता था। खेती सम्बन्धी ज्ञान बढ़ने पर नदियों के किनारों कुओं और बावड़ियों का निर्माण किया गया, जोधपुर नगर सहित गांव-गांव में वर्षा की एक-एक बूंद को सहेजकर रखने के तरीके को उत्तरोत्तर खोजे एवं जगह-जगह उनको बनाने का बहुत ही व्यावहारिक, व्यवस्थित और विशाल संगठन खड़ा किया। इनके निर्माण की तकनीकी में उत्तरोत्तर विकास होता गया। जोधपुर जैसे शहर में सदियों से वर्षा के पानी की एक-एक बूंद का संग्रह करने के लिए उच्च कोटि की तकनीकों से नहरों का निर्माण कर जमीन के नीचे, उसके ऊपर साईफन से 20 फीट ऊँची दीवारों पर मेहराब बनाकर और बहुत सी जगह पहाड़ों में 20-30 फीट गहरी एवं 20 फीट चौड़ी खाइयां खोदकर सिर्फ ढलान से शहर में पानी उपलब्ध कराया जाता था।

मूलशब्द: मरु भूभाग, जलाशय निर्माण, कुओं, बावड़ियों, नाडियों, टांके

भारत में दीर्घकाल से कुएँ, बावड़ियाँ, झालरे, नाडे, नाडियाँ और टांकों आदि का निर्माण करना धर्म का सर्वोच्च स्वरूप समझा जाता रहा है। इस कार्य में आस्था रखने वाले लोग सदियों से इनका निर्माण करते आ रहे, सृष्टि के प्रारम्भ से ही लोग नदियों, झरनों एवं पानी के भराव के आसपास के स्थानों पर रहते आये थे और वहीं पर उत्पन्न होने वाले फल-फूलों पर अपना जीवन-निर्वाह करते थे। बाद में वे लोग नदियों, झरनों और पोखरों से नलियाँ निकालकर खेती करने लगे। वर्षा के बाद नदी-नालों का पानी कम होने पर उन्होंने अपनी फसल को पानी देने के लिए नदियों में पानी रोकना शुरू किया, जिससे कुछ समय के लिए उनको पानी उपलब्ध हो जाता था। खेती सम्बन्धी ज्ञान बढ़ने पर नदियों के किनारे कुओं और बावड़ियों का निर्माण किया गया, जिससे उन्होंने खेती शुरू की और वर्षा के बाद खेतों में पानी दिया जाने लगा। इस प्रकार कुओं और बावड़ियों का निर्माण शुरू हुआ।

राजस्थान की भौगोलिक स्थिति एवं वातावरण परिस्थिति अलग प्रकार की है। यह अन्य राज्यों से बिल्कुल भिन्न है। थार रेगिस्तान का 66 प्रतिशत (3.71 लाख वर्ग कि.मी. में से 2.08 लाख वर्ग कि.मी.) क्षेत्र राजस्थान में है। राजस्थान के भू-भाग जिसे मुख्यतः मारवाड़ कहा जाता है, वहां अल्प वर्षा, नियमित रूप से अकाल की स्थिति, भू-जल के स्तर में अनवरत गिरावट एवं तापमान में असामान्य परिवर्तन के दृष्टिगत ही राहत एवं बचाव के जो जतन किए जाते रहे, उन्हीं से तरह-तरह के जलाशयों का निर्माण इस भूभाग पर हुआ। जल की कमी को दूर करने के लिए जल संरक्षण ढाँचों का निर्माण किया जाना अत्यधिक महत्वपूर्ण गतिविधि रहा।¹ मरु भूभाग में भूमि बालू, कम वर्षा तथा जल के भूमि में रिसने की गति अधिक होने के कारण जल का सतह पर बहकर जाना संभव नहीं होता, इसलिए जल संग्रह एवं प्राप्ति के तरह-तरह के स्वरूप यहां बने। मरु मानवों ने जोधपुर नगर सहित गांव-गांव में वर्षा की एक-एक बूंद को सहेजकर रखने के तरीके खोजे एवं जगह-जगह उनको बनाने का बहुत ही व्यावहारिक, व्यवस्थित और विशाल संगठन खड़ा किया। सीधे बरसात से मिलने वाला जल जो धरातल पर बहता है और उसे तालाब, नदी आदि में रोका जाता है। जल का दूसरा रूप पाताल जल है जो कुओं, बावड़ियों, झालरों से निकाला

जाता है। तीसरा रूप रेजाणी जल है। धरातल से नीचे उतरा परन्तु पाताल में न मिल पाया जल ही रेजाणी जल है इसे समेटकर संग्रहीत करने का स्वरूप ही कुई है।² देश के सबसे कम वर्षा के क्षेत्र राजस्थान और उनमें भी सबसे अधिक सूखा माने जाने वाले, राजस्थान में बसे सैकड़ों गांवों के नाम ही तालाब के आधार पर मिलते हैं। गांवों के नाम के साथ ही जुड़ा है। 'सर'। यानी तालाब। सर नहीं तो गांव कहा? तालाब बनाने के लिए वैसे तो दसों दिशाएं खुली हैं, फिर भी तालाब जगह का चुनाव करते समय अनेक बातों का ध्यान रखा गया। तालाब निर्माण के लिए जगह चयनित हो जाने के पश्चात आगोर जहां से जल आएगा, उसकी साफ-सफाई, सुरक्षा व्यवस्था को सुनिश्चित कर लिया जाता है। इसी तरह आगर, जहां पानी आएगा, उसका स्वभाव परख लिया जाता है। पाल कितनी ऊँची होगी, कितनी चौड़ी होगी, कहां से कहां तक बंधेगी तथा तालाब में जल पूरा भरने पर उसे बचाने के लिए अपरा कहां बनेगी, इसका आकलन भी कर लिया जाता है।

वर्षा की बूंदों यानी पालर के जल को साफ सुथरी जगह पर रोक कर उनका संग्रह करने के जतन ने ही कुड-कुंडी, टांका आदि का स्वरूप बनाया। इस भू-भाग के समाज ने जल को अनगिनत बूंदों में देखा और इन्हें टांको, कुण्ड-कुण्डियों, वेदियों, नाडी-नाडियों, तालाबों, बावड़ियों, कुओं एवं कुइयों में भर कर संचित, संग्रहीत तथा सुरक्षित कर लिया। जलाशय निर्माण में मुख्य शिल्पियों में प्रथम गजधर-प्रारूप ढाँचा बनाने वाले तथा द्वितीय सूत्रधार अर्थात् प्रबन्ध करने वाले होते थे।³ निर्माण पूर्व अधिकारियों को जलाशय के स्थल का चुनाव नाप एवं जाँच पड़ताल हेतु भेजा जाता था। महाराजा स्वयं भी कई बाद जलाशय निर्माण के समय उपस्थित रहते थे।⁴ मालवा आदि से अच्छे कारीगर, मजदूर बुलाये जाते थे। पत्थर, लोहा आदि बांध निर्माण से संबंधित सामग्री को उपयुक्त स्थानों से मंगवाया जाता था।⁵ भूमिगत जल का सही आकलन करने में सिद्धहस्त व्यक्तियों द्वारा बताये गये स्थान पर कुएँ, बावड़ियाँ आदि खोदे जाते थे। नदियों एवं सरोवरों के रिसाव क्षेत्र में इनका निर्माण अधिक किया जाता था, क्योंकि वहां जल की उपलब्धता निश्चित होती थी।⁶ जल-आवक क्षेत्र का पता लगाने के पश्चात जहां कहीं स्थान मिले, वहां बिना प्रमाण⁷ के सरोवर भी बनाये जा सकते हैं। दो

पहाड़ों के बीच या पहाड़ी की घाटी को बांधकर कम व्यय में बड़े तालाब बनाये जाये। जहां आसपास अधिक जमीन हो तो उसकी जल भराव क्षमता बढ़ सकती है। ऐसे सरोवर अच्छे माने जाते थे।⁸ इनके निर्माण की तकनीकी में उत्तरोत्तर विकास होता गया। राजवल्लभ में मकान, जलाशय आदि की नींव इतनी गहरी खोदने के निर्देश हैं कि नीचे पक्का पत्थर आ जाये।⁹ कठोर पत्थरों की खुदाई हेतु चिनियां, सबल आदि को अग्नि-जल एवं औषधियों में बुझाकर उनको नुकीला बनाया जाता था। औजारों को कठोर बनाने के लिए बबूल, तेंदुए, पलास, इमली, बेर का पानी, छाछ, नीम की छाल, गाय का मूत्र और तेल-छाछ एवं पानी को मिलाकर प्रयुक्त किया जाता था।¹⁰ अन्य औजार वहीं प्रयोग में लिये जाते रहे थे, जो आज भी प्रचलित हैं।

देशभर में जोधपुर ही ऐसा शहर है जहां सदियों से वर्षा के पानी की एक-एक बूंद का संग्रह करने के लिए, उच्च कोटि की तकनीकों से नहरों का निर्माण कर जमीन के नीचे, उसके ऊपर साईफन से 20 फीट ऊंची दीवारों पर मेहराब बनाकर और बहुत सी जगह पहाड़ों में 20-30 फीट गहरी एवं 20 फीट चौड़ी खाइयां खोदकर सिर्फ ढलान से शहर में पानी उपलब्ध कराया जाता था।

उम्मेद सागर नामक झील का निर्माण पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कराया। वर्तमान में जिस स्थान पर यह झील है वहां पहले महाराजा अमनसिंहजी ने बांध का उद्यान बनवाया था और महाराजा जसवंत सिंह जी द्वितीय ने सन् 1983 में उसे चौपासनी बांध नाम दिया था। उसकी मरम्मत महाराजा सरदारसिंहजी ने सन् 1908 में तथा महाराजा सुमेरसिंहजी ने सन् 1918 में उसके टूट जाने पर कराई थी लेकिन सन् 1924 में यह फिर से टूट गया। इसके बाद इसकी मरम्मत नहीं कराई गई और उसे उद्यान का स्वरूप प्रदान कर दिया गया।

महाराजा उम्मेदसिंहजी ने सन् 1938 में पुनः तखत सागर का निर्माण कराया। तखत सागर एवं नहर का कार्य पूरा हो जाने पर इसका उद्घाटन समारोह 29 अप्रैल 1938 को आयोजित किया गया। इससे जोधपुर शहर को स्वच्छ जल मिलने लगा।

बाल समन्द झील जोधपुर का सबसे पुराना जल स्रोत है। यह झील जोधपुर की स्थापना से भी बहुत पहले बनी थी। इसी झील का निर्माण मण्डोर से कुछ पहले संवत् 1175 में नाहड़ राव के भाई बालाराव परिहार ने करवाया था। इसका नए सिरे से पुनः निर्माण जोधपुर नगर के संस्थापक राव जोधा ने कराया। बाद में इस झील का विस्तार महाराजा सूरजसिंहजी ने कराया।

जोधपुर नगर की विशाल आबादी के लिए जलापूर्ति का मुख्य स्रोत आज भी कायलाना झील है। इस झील का निर्माण महाराजा तख्तसिंह जी के समय नाजर सालगराम ने कराया था। उस समय झील पर बांध तथा बाग बनाने के साथ ही महल का निर्माण भी कराया गया था। संवत् 1905 में कायलाना झील का निर्माण कार्य शुरू हुआ तथा महाराजा जसवन्तसिंह द्वितीय के समय पूरा हुआ। कायलाना झील पर जो दो प्राचीन उद्यान थे, उन्हें जोधपुर के शासक महाराजा भीमसिंह तथा महाराजा तख्तसिंह ने अपने शासनकाल के दौरान बनवाया था। ये दोनों उद्यान तब नष्ट कर दिए गए जब जोधपुर नगर की जलापूर्ति के लिए इस कृत्रिम झील के निर्माण का कार्य शुरू किया गया। यह झील जोधपुर नगर की जलापूर्ति का मुख्य स्रोत बनी हुई है।

मारवाड़ के हृदय स्थल जोधपुर की बावड़ियों का महत्व है। जोधपुर नगर में बनी स्थापत्य कला की प्रतीक इन नामचीन बावड़ियों में से कुछ का जहां एक ही प्रवेश द्वार है, वहीं कई बावड़ियों में प्रवेश के लिए दो और तीन द्वार भी बनाए गए। इसी तरह कई बावड़ियां एक मंजिला रही तो कई बावड़ियां दो और तीन मंजिला भी बनाई गईं। इन मंजिलों के प्रांगण में ही जन समुदाय विश्राम करता रहा और सामाजिक बैठकें तथा धार्मिक आयोजन होते रहे। बावड़ी किस स्थान पर बनेगी यह निर्धारण

मारवाड़ में पारखी लोग करते हैं जिन्हें जनवाणी में 'पानी वाले महाराज' कहा जाता है। इनमें प्रमुख बावड़ियां-इमरती बावड़ी, चांद बावड़ी, जालप बावड़ी, तापी बावड़ी, नाजरजी की बावड़ी, चैनपुरा अखाड़ा की बावड़ी, नाजरजी की दूसरी बावड़ी, राजसिंह चांदावत की बावड़ी, रंगराय की बावड़ी, राय का बाग ऊपरी बावड़ी, पंडित जी बावड़ी, माहेश्वरियों की बावड़ी, कंदोईयों की बावड़ी, सेवापुरी की बावड़ी, धर्मपुरा की बावड़ी, मोदीजी की बावड़ी, व्यासजी की बावड़ी, सूरजकुंड बावड़ी, राम बावड़ी, नैणसी मुहता बाग की बावड़ी, मियां का बाग की बावड़ी, खरबूजा बावड़ी, धाय की बावड़ी, पुरोहित की बावड़ी, रघुनाथ की बावड़ी, बीजेराज जोशी की बावड़ी, रावटी की बावड़ी, आदि हैं। ये सभी बावड़ियां जोधपुर नगर के लिए प्रमुख जल स्रोत रही और इसका निर्माण भविष्य की आवश्यकता को देख-समझ कर शासक तथा समाज के प्रबुद्ध वर्ग के समय-समय पर कराया।

बावड़ियां-कुएँ जहां भू-जल के मुख्य स्रोत रहे वहीं बरसात के जल को संगृहीत और सुरक्षित रखने के प्रमुख आशय तालाब रहे। बड़ी संख्या में लोग जल का उपयोग कर सके, इसके लिए जोधपुर नगर के भीतर एवं बाहर अनेक तालाब समय-समय पर बने। नगर के बाहरी क्षेत्रों में पहाड़ियों के मध्य किसी गहराई वाले स्थान पर ये तालाब बनाए गए वहीं नगर के भीतरी भागों में तालाबों को चारों ओर ऊंची दीवारों से घेर कर बनाया गया तथा घाट बनाए गए। पहाड़ी क्षेत्रों में बने तालाबों में बरसात का जल पहाड़ों से बहकर स्वतः पहुंचकर एकत्र होता था जबकि नगर के भीतरी भागों में बने तालाबों तक जल लाने के लिए पक्की नहरों का निर्माण किया गया। तालाबों की सफाई के प्रति जन-जन सजगता बरतता रहा, कारण कि वह जानता था कि जीवनदायी जल की स्वच्छता एवं निर्मलता ही उसके, उसके परिवार, उसके समाज और उसके नगर की खुशहाली का मुख्य आधार है।

मरुभूमि में बरसने वाले अल्प जल को पूरी तरह रोक लेने की महारत पालीवाल ब्राह्मणों को हासिल थी। जोधपुर के निकट पल्ली नगर में दसवीं शताब्दी के आस-पास बसने के कारण ही पल्लीवाल यानी पालीवाल ब्राह्मण कहलाए। ये खडीन के अच्छे निर्माता थे। मरुभूमि का ऐसा कोई टुकड़ा जहां जल बहकर आता हो, वहां दो या तीन तरफ से मेड़बन्दी करके जल को रोककर विशिष्ट ढंग से है, पहले तो तालाब ही है। मरुभूमि से सैकड़ों मन-अनाज इन्हीं खडीनों में पैदा किया जाता रहा है। आज भी जोधपुर, जैसलमेर, बाड़मेर क्षेत्र में सैकड़ों खडीन खड़ी हैं।

कुएँ मानव जीवन में जलापूर्ति के लिए कितने महत्वपूर्ण रहे हैं, यह इसी से स्पष्ट हो जाता है कि जितने मुहावरे-लोकोक्तियां कुओं को लेकर प्रचलन में हैं, उतनी अन्य किसी जलाशय को लेकर नहीं। 'कुआं खोदना', 'कुआं चलाना', कुएं में झांकना', 'कुआं टूटना' कुएं की मिट्टी कुएं में लगाना', कुएं पर से प्यासा आना', 'कुएं में फेंकना', 'कुएं में बांस डालना', 'कुएं में भांग पड़ना', 'कुएं में डालना' आदि इतने मुहावरे और लोकोक्तियों का इस जलाशय से जुड़े हुए होना उसके महत्व को प्रतिपादित अच्छी तरह कर देते हैं।

जोधपुर नगर में कुएं बनाने का क्रम राव जोधा के साथ शुरू होकर बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक बना रहा। सूरसागर तालाब निर्माण के साथ ही सूरज बेरा भी बनाया गया। उसके बाद सूरसागर तालाब के पास ही बनाए गए बगीचें में कुआं बनवाया गया। महाराज सूरसिंह के समय भाटी गोविन्ददास ने राजबाग क्षेत्र में महल कुआं, महाराजा गजसिंह के समय सूरसागर क्षेत्र में बागपोल कुआं, सूरसागर क्षेत्र में ही संवत् 1671 में कूपावत रामसिंह ने कुआं बनवाया। महाराजा मानसिंह के समय कोतवाल जीवनदास ने और महाराजा तख्तसिंह के समय कोतवाल शेषकरण पंवार ने जो कुएं बनवाए, वे आज भी कोतवाली तथा नवचौकियां इलाकें में मौजूद हैं। महाराज जसवन्तसिंह की रानी

ने हरमंदिर के पास कुआं बनवाया। सूरसागर क्षेत्र में ही शंकर जोशी ने कुआं बनवाया जो जाजा बेरा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह कुआं संवत् 1717 में बना। इसके सोलह साल बाद यानि संवत् 1733 में रूपा झीपा ने जो कुआं बनवाया वह रूपा बेरा के नाम से आज भी मौजूद है। अधिक दोहन करने व अकालों के कारण इन झीलों में पानी की मात्रा कम होने लगी। ओटो के नालें नहीं चलने के कारण सभी कुएं, बावड़ियाँ और झालरे आदि सूख गये और कुछ का पानी काम में नहीं लेने से गन्दा हो गया। तब लोगों ने जलकल (वाटर पम्प) की ही शरण ली और इन परम्परागत जलस्रोतों को भूल गये।

संदर्भ सूची

1. एनुअल एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट ऑफ जोधपुर स्टेट, 1884-1946.
2. ओझा, गौरीशंकर, जोधपुर का इतिहास, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र, 2010, पृ.स.35
3. शर्मा, श्रीराम, महाराणा राजसिंह एण्ड हिज टाईम्स, पृ.46
4. राजप्रशस्ति, सर्ग 1, श्लोक 10: सर्ग 9, श्लोक 9 व 19-21: जयसमुद्र प्रशस्ति: सर्ग 12
5. वीर विनोद, भाग, पृ. 667
6. आबरगढ़, उदयपुर, गोगून्दा, चावण्ड आदि का सर्वे।
7. विश्ववल्लभ: में बिना प्रमाण के जलाशय बनाने का निर्देश यहां की भौगोलिक स्थिति को देखकर दिया गया है। मेवाड़ में पहाड़ों के कारण निश्चित प्रमाण के जलाशय बनाने की अपेक्षा जल संसाधन की वृद्धि पर बल देने की मंशा झलकती है। साथ ही कम खर्चे में इनके, निर्माण पर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। कुम्भलगढ़ दुर्ग में एक के नीचे दूसरा जलाशय बनाया गया है, इस तकनीक से सम्पूर्ण क्षेत्र का जल एकत्रित किया जाता था। शोध पत्र: महाराणा कुम्भाकालीन सुरक्षा के प्रमुख पहलू, कुम्भा स्मारिका, 1998-99, पृ.69.
8. विश्ववल्लभ, उल्लास 1
9. राजवल्लभ, अध्याय 1, श्लोक 27
10. विश्ववल्लभ, उल्लास 2, श्लोक 25-39